पटना उच्च न्यायालय में

सिविल विविध क्षेत्राधिकार संख्या 1824/2018

= = = =

सार्वजनिक रिकॉर्ड भी इसमें शामिल होते हैं। – बिक्री विलेख एक निजी दस्तावेज़ है, लेकिन उप–पंजीयक द्वारा जारी की गई इसकी प्रमाणित प्रति एक सार्वजनिक रिकॉर्ड मानी जाती है और धारा 74(2) के अंतर्गत आती है। – सुप्रीम कोर्ट का निर्णय: अपैया बनाम अंडिमुथु, सिविल अपील नंबर 14630/2015 पर निर्भरता) ।

(पैरा 7–8)

- प्रमाणित प्रतियों के लिए औपचारिक प्रमाण की आवश्यकता – प्रमाणित प्रति को भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 65(ई) और 77 के तहत साक्ष्य के रूप में स्वीकार किया जा सकता है।– हालांकि, प्रमाणित प्रतियां मूल दस्तावेज़ के निष्पादन को साबित नहीं करतीं। (पंजीकरण अधिनियम, 1908 की धारा 57(5) पर निर्भरता, जो प्रमाणित प्रतियों को मूल दस्तावेज़ की सामग्री को साबित करने के लिए स्वीकार्य बनाती है) – (रोमन कैथोलिक मिशन बनाम मद्रास राज्य, AIR 1966 SC 1457 पर निर्भरता)

(पैरा 9)

- निचली अदालत का निर्णय त्रुटिहीन – दस्तावेज़ को मुद्दों के निपटारे से पहले पेश किया गया था, इसलिए इसकी प्रासंगिकता बाद में तय की जा सकती थी। – प्रमाणित प्रतियां गौण साक्ष्य होती हैं, लेकिन धारा 65(ई) के तहत मूल दस्तावेज़ की सामग्री के प्रमाण के रूप में स्वीकार्य होती हैं। निचली अदालत ने दस्तावेज़ को साक्ष्य के रूप में सही ढंग से स्वीकार किया, लेकिन यह प्रश्न खुला छोड़ दिया कि क्या इससे वादी के दावे की पुष्टि होती है

(पैरा 10)

पटना उच्च न्यायालय का निर्णय आदेश

= = = =

राशि प्राप्त करने और उनकी जमीन वापस करने के लिए कहा, लेकिन प्रतिवादियों/प्रतिवादियों ने 15.03.1995 को अनुरोध को अस्वीकार कर दिया। यह भी पता चला कि नोटिस मिलने पर प्रतिवादी/प्रतिवादी उपस्थित हुए और अपना लिखित बयान दर्ज किया, जिसमें अन्य बातों के साथ–साथ यह भी कहा गया कि वादी संख्या 1 ने अपने पिता के साथ मिलकर वर्तमान मुकदमे के विषय के संबंध में प्रतिवादियों के पिता के पक्ष में 10.10.1984 को एक बिक्री विलेख निष्पादित किया था और विलेख रजिस्ट्रार, बेगूसराय के समक्ष पंजीकृत था। इस कारण से वादी/प्रतिवादी उनके द्वारा निष्पादित बिक्री विलेख के वाचन के खिलाफ मामला नहीं बना सके। प्रतिवादियों ने आगे दावा किया कि उन्होंने दिनांक 10.10.1984 के विक्रय विलेख के आधार पर अधिकार, शीर्षक और हित अर्जित किया और उक्त विक्रय विलेख के माध्यम से हस्तांतरित भूमि पर उनका एकमात्र कब्जा हो गया। प्रतिवादियों ने राजस्व अभिलेखों में अपने नाम भी बदलवा लिए और किराया देना शुरू कर दिया और उन्हें किराया रसीदें जारी की गईं। मुकदमे के लंबित रहने के दौरान, वादी/प्रतिवादियों ने 16.05.2018 को निचली अदालत में एक आवेदन दायर किया, जिसमें राम बृक्ष सिंह, प्रतिवादी/याचिकाकर्ता संख्या 1 द्वारा अजय कुमार सिंह के पक्ष में निष्पादित दिनांक 21.05.1990 के विक्रय विलेख की प्रमाणित प्रति स्वीकार करने की प्रार्थना की गई, जिसमें उक्त दस्तावेज को सार्वजनिक दस्तावेज माना गया। आवेदन की स्थिरता को चुनौती देते हुए एक प्रत्युत्तर दायर किया गया और इस आधार पर भी कि वर्तमान मुकदमे में इसका कोई प्रासंगिकता नहीं है। हालाँकि, विद्वान विचारण न्यायालय ने उपरोक्त दस्तावेज़ को स्वीकार कर लिया और इसे प्रदर्श के रूप में चिह्नित किया और इस प्रकार, दिनांक 02.08.2018 के आपत्तिजनक आदेश के तहत दिनांक 16.05.2018 के आवेदन को स्वीकार कर लिया।

3. प्रतिवादियों/याचिकाकर्ताओं की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया कि याचिकाकर्ता संख्या 1 द्वारा अजय कुमार सिंह के पक्ष में निष्पादित बिक्री विलेख को सार्वजनिक दस्तावेज मानकर स्वीकार करने में विद्वान विचारण न्यायालय का कोई औचित्य नहीं था। विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति को सार्वजनिक दस्तावेज नहीं कहा जा सकता। विद्वान विचारण न्यायालय ने इस तथ्य पर विचार नहीं किया कि उक्त दस्तावेज का वर्तमान मामले के निर्णय में कोई प्रासंगिकता नहीं है और बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति में उल्लिखित भूमि, वाद में मुकदमे की संपत्ति के रूप में उल्लिखित भूखंडों से भिन्न है। विद्वान अधिवक्ता ने आगे प्रस्तुत किया कि बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति प्राथमिक साक्ष्य नहीं है और भारतीय साक्ष्य अधिनियम (जिसे आगे 'साक्ष्य अधिनियम' कहा जाएगा) की धारा 63 के तहत प्रदान किए गए द्वितीयक साक्ष्य की श्रेणी में आएगी। वादी/प्रतिवादी द्वितीयक साक्ष्य देने के लिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के तहत निर्धारित शर्तों को पूरा करने में विफल रहे क्योंकि साक्ष्य अधिनियम की धारा 64 में प्रावधान है कि दस्तावेजों को प्राथमिक साक्ष्य द्वारा साबित किया जाना चाहिए।

केवल अपवाद साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 के तहत उल्लिखित शर्तें हैं। विद्वान अधिवक्ता ने आगे कहा कि विद्वान विचारण न्यायालय ने तब और गलती की जब उसने उक्त दस्तावेज की प्रासंगिकता पर विचार किए बिना, औपचारिक सबूत की आवश्यकता के बिना उक्त दस्तावेज को अवैध रूप से सार्वजनिक दस्तावेज के रूप में स्वीकार कर लिया। इस प्रकार, विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि आरोपित आदेश संधारणीय नहीं है और इसे रद्द किया जाना चाहिए।

4. *इसके विपरीत,* वादी/प्रतिवादी की ओर से उपस्थित विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आरोपित आदेश में कोई अवैधता नहीं है। विचाराधीन दस्तावेज मुद्दों के निपटारे से पहले दायर किया गया था और इसकी प्रासंगिकता पर विचार करते हुए, विद्वान विचारण न्यायालय ने इसे सही ढंग से स्वीकार किया और इसे प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया। विद्वान वकील ने आगे प्रस्तुत किया कि जो दस्तावेज प्रदर्शित किया गया है वह बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति है और यह साक्ष्य अधिनियम की धारा 74 (2) के तहत सार्वजनिक दस्तावेज की परिभाषा के अंतर्गत आएगा। चूंकि यह निजी दस्तावेज का सार्वजनिक रिकॉर्ड है। विद्वान अधिवक्ता ने ***मोहम्मद सैमुद्दीन शेख बनाम अबेजुद्दीन शेख*** के मामले में गुवाहाटी उच्च न्यायालय के निर्णय का हवाला दिया, जिसकी रिपोर्ट ***एआईआर 1979 गुवाहाटी 14*** में दी गई थी, जिसमें विद्वान एकल न्यायाधीश ने माना है कि बिक्री विलेख एक निजी दस्तावेज है, लेकिन उप रजिस्ट्रार के कार्यालय में रखा गया बिक्री विलेख का रिकॉर्ड उस निजी दस्तावेज का सार्वजनिक रिकॉर्ड है और इसलिए यह सार्वजनिक दस्तावेज की श्रेणी में आता है। यह भी माना गया है कि दस्तावेज को साबित करने के लिए विलेख की प्रमाणित प्रति स्वीकार्य है। इस प्रकार, विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया कि आरोपित आदेश में कोई कमी नहीं है और इसे बनाए रखने और पुष्टि करने की आवश्यकता है।

5. मैंने इस मुद्दे पर गहनता से विचार किया है। बेशक, विचाराधीन दस्तावेज मुद्दे के निपटारे से पहले दायर किया गया था और इसलिए, यह दस्तावेजों के प्रवेश–अस्वीकृति के समय उपलब्ध था। किसी दस्तावेज को केवल प्रदर्शन के रूप में चिह्नित करने का मतलब यह नहीं है कि यह साक्ष्य का स्वीकार्य टुकड़ा बन गया है। जब दस्तावेज को प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया जाता है तो इसकी स्वीकार्यता पर आपत्ति समाप्त नहीं होती है। ***रोमन कैथोलिक मिशन बनाम मद्रास राज्य और अन्य*** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय का संदर्भ दिया जा सकता है, जिसे ***एआईआर 1966 एससी 1457*** में रिपोर्ट किया गया था। इसलिए, न्यायालय हमेशा इस तरह के दस्तावेज की प्रासंगिकता और अन्य पहलुओं पर विचार करके इसकी स्वीकार्यता का परीक्षण कर सकता है। इसलिए, उपरोक्त आधार पर विवादित आदेश को गलत नहीं ठहराया जा सकता है।

6. अब सवाल यह है कि क्या बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति को सार्वजनिक दस्तावेज माना जा सकता है ताकि उसे औपचारिक प्रमाण से छूट देकर एक प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया जा सके? साक्ष्य अधिनियम की धारा 74 सार्वजनिक दस्तावेज का वर्णन करती है जो इस प्रकार है:–

"74. सार्वजनिक दस्तावेज.–

निम्नलिखित दस्तावेज सार्वजनिक दस्तावेज हैं:–

(1) कृत्यों को बनाने वाले दस्तावेज, या कृत्यों के अभिलेख–

(i) संप्रभु प्राधिकरण के,

(ii) आधिकारिक निकायों और न्यायाधिकरणों के, और

(iii) सार्वजनिक अधिकारियों, विधायी, न्यायिक और कार्यकारी, [भारत के किसी भी हिस्से या राष्ट्रमंडल के], या किसी विदेशी देश के;

(2) निजी दस्तावेजों के [किसी भी राज्य में] रखे गए सार्वजनिक अभिलेख।"

7. साक्ष्य अधिनियम की धारा 75 में यह प्रावधान है कि अन्य सभी दस्तावेज निजी हैं। अब बिक्री विलेख निःसंदेह एक निजी दस्तावेज है, लेकिन क्या इसकी प्रमाणित प्रति किसी भी राज्य के निजी दस्तावेज में रखे गए सार्वजनिक अभिलेखों की श्रेणी में आएगी? मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने ***श्रीमती रेखा राणा एवं अन्य बनाम श्रीमती रत्नेश्री जैन के मामले में, एआईआर 2006 एमपी 107*** में रिपोर्ट किया है कि यह प्रस्ताव गलत है कि बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति एक सार्वजनिक दस्तावेज है या पंजीकृत बिक्री विलेख एक सार्वजनिक दस्तावेज है। यह आगे माना गया है कि पंजीकृत दस्तावेज (बिक्री विलेख आदि) एक सार्वजनिक दस्तावेज नहीं है। यह एक निजी दस्तावेज है। इसके अलावा, पंजीकृत दस्तावेज की प्रमाणित प्रति, जो बुक से कॉपी की गई है और पंजीकरण अधिकारी द्वारा जारी की गई है, न तो एक सार्वजनिक दस्तावेज है, न ही एक निजी दस्तावेज की प्रमाणित प्रति है, बल्कि एक सार्वजनिक दस्तावेज की प्रमाणित प्रति है। दूसरे शब्दों में, पंजीकृत दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति सार्वजनिक दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति है। ऐसा कहने का आधार यह है कि जब कोई बिक्री विलेख पंजीकरण प्राधिकरण के समक्ष पंजीकृत होता है, तो पंजीकरण कार्यालय में रखी गई पुस्तक में आवश्यक प्रविष्टियाँ रखी जाती हैं और इस प्रकार, यह एक रिकॉर्ड है जिसे 'निजी दस्तावेज़ों की स्थिति में रखा जाता है' और इसलिए, यह एक सार्वजनिक दस्तावेज़ है। जब कोई व्यक्ति कार्यालय में पंजीकृत दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन करता है जिसे बुक 1 में दर्ज/दायर किया जाता है, तो बुक 1 में प्रतियों/दायर के रूप में दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति आवेदक को प्रदान की जाती है। बुक 1 में किसी भी प्रविष्टि की ऐसी प्रमाणित प्रति सार्वजनिक दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रति है। लेकिन बुक 1 से निकाली गई पंजीकृत दस्तावेज़ की ऐसी प्रमाणित प्रति स्वयं एक

सार्वजनिक दस्तावेज़ नहीं है। यह वास्तव में एक प्रति (बुक 1 में दर्ज मूल विलेख की प्रति) की एक सच्ची प्रति है। यह चर्चा मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा पंजीकरण अधिनियम, 1908 के प्रावधानों, विशेष रूप से धारा 51 और 57 पर विचार करते हुए की गई है। इस प्रकार, यह निष्कर्ष निकाला गया है कि रजिस्टरिंग अधिकारी द्वारा बुक 1 से कॉपी करके जारी किए गए पंजीकृत दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रतिलिपि, सार्वजनिक दस्तावेज़ की प्रमाणित प्रतिलिपि है। इसी तरह का प्रश्न माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष ***अप्पैया बनाम अंदिमुथु @ थंगापंडी और अन्य, [सिविल अपील संख्या 14630/2015 {@ एसएलपी (सी) संख्या 10013/2015}]*** के मामले में आया था, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ संख्या 29 में टिप्पणी की है, जो इस प्रकार है:–

> *"**29.** उपरोक्त सभी परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए तथा साक्ष्य अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों के आलोक में हम सर्वप्रथम इस प्रश्न पर विचार करेंगे कि क्या अपीलकर्ता/वादी ने एक्सट.ए1 की विषय–वस्तु को सिद्ध करने में सफलता प्राप्त की है। धारा 65(ई) के अनुसार जब किसी दस्तावेज की मूल प्रति धारा 74 के अर्थ में सार्वजनिक दस्तावेज है, तो उसके मूल से संबंधित द्वितीयक साक्ष्य अर्थात उसके अस्तित्व, स्थिति या विषय वस्तु के बारे में प्रमाणित प्रति प्रस्तुत करके दी जा सकती है। एक्सट.ए1 निर्विवाद रूप से एसआरओ अंडीपट्टी के दिनांक 27.08.1928 के बिक्री विलेख संख्या 1209/1928 की प्रमाणित प्रति है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 74(2) के अनुसार, इसका मूल सार्वजनिक दस्तावेज की परिभाषा में आता है और ऐसा कोई मामला नहीं है कि इसे साक्ष्य अधिनियम के तहत दिए गए तरीके से प्रमाणित नहीं किया गया है। जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, एकमात्र आपत्ति यह है कि एक्सटेंशन ए1 के रूप में जो प्रस्तुत किया गया है वह बिक्री विलेख की केवल प्रमाणित प्रति है और इसका मूल साक्ष्य में प्रस्तुत नहीं किया गया था। साक्ष्य अधिनियम और पंजीकरण अधिनियम, 1908 के तहत प्रासंगिक प्रावधानों के आवेदन पर उक्त आपत्ति की खोखली और असंतुलितता का पता चलेगा। इस संबंध में साक्ष्य अधिनियम की धारा 77 और 79, जैसा कि पहले उद्धृत किया गया है, प्रासंगिकता ग्रहण करती है। धारा 77 किसी सार्वजनिक दस्तावेज की प्रमाणित प्रति को उसके मूल की सामग्री के सबूत में द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत करने*

का प्रावधान करती है। धारा 79 प्रमाणित प्रतियों की वास्तविकता के बारे में अनुमान लगाने का प्रावधान है, बशर्ते कि ऐसी प्रकृति के दस्तावेज की प्रमाणित प्रति को साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य घोषित करने वाला कानून मौजूद हो। जब उपरोक्त प्रावधानों के तहत यह स्थिति हो, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि प्रश्नगत दस्तावेज एक पंजीकृत बिक्री विलेख है, जो सार्वजनिक दस्तावेज की परिभाषा के अंतर्गत आता है, तो सवाल यह है कि क्या कोई ऐसा कानून मौजूद है जो किसी दस्तावेज की ऐसी प्रमाणित प्रति को उसके मूल दस्तावेज की सामग्री को साबित करने के उद्देश्य से साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य घोषित करता है। पंजीकरण अधिनियम की धारा 57 की उप–धारा (5) प्रासंगिक प्रावधान है जो यह प्रावधान करता है कि पंजीकरण अधिनियम की धारा 57 के तहत दी गई प्रमाणित प्रति उसके मूल दस्तावेज की सामग्री को साबित करने के उद्देश्य से स्वीकार्य होगी। इस संदर्भ में यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि इसके तहत जारी प्रमाणित प्रतिलिपि मूल दस्तावेज़ की प्रतिलिपि नहीं है, बल्कि पंजीकरण प्रविष्टि की प्रतिलिपि है जो स्वयं मूल की प्रतिलिपि है और साक्ष्य अधिनियम की धारा 74(2) और उपधारा(5) के तहत एक सार्वजनिक दस्तावेज़ है, जो इसे मूल की सामग्री को साबित करने के लिए साक्ष्य में स्वीकार्य बनाता है।.....

.....”

(जोर देने के लिए रेखांकित)

8. अब वर्तमान मामले में विवाद पर वापस आते हुए, इससे पहले की गई चर्चा के आलोक में, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि पंजीकृत बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति साक्ष्य अधिनियम की धारा 74 (2) के तहत सार्वजनिक दस्तावेज की श्रेणी में आएगी।

9. अंतिम प्रश्न जो शेष है वह यह है कि क्या इस दस्तावेज को औपचारिक प्रमाण की आवश्यकता को समाप्त करके एक प्रदर्शन के रूप में चिह्नित किया जा सकता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 76 एक अधिकारी को एक सार्वजनिक दस्तावेज की अभिरक्षा रखने के लिए रजिस्ट्रार कार्यालय में एक प्रमाणित प्रतिलिपि देने का अधिकार देती है जो उस कार्यालय में पंजीकृत सभी बिक्री कार्यों का सार्वजनिक रिकॉर्ड रखता है। साक्ष्य अधिनियम की धारा 74 के तहत सार्वजनिक दस्तावेज की परिभाषा में किसी भी निजी दस्तावेज की स्थिति में रखे गए सार्वजनिक रिकॉर्ड शामिल हैं। इसलिए एक प्रमाणित प्रतिलिपि साक्ष्य

अधिनियम की धारा 65 (ई) और 65 (एफ) दोनों के तहत साक्ष्य में स्वीकार्य है। इसलिए प्रमाणित प्रतिलिपि रजिस्ट्रार के कार्यालय में रखे गए बिक्री कार्य के सार्वजनिक रिकॉर्ड का द्वितीयक साक्ष्य है। पंजीकरण अधिनियम की धारा 57 (5) को लागू करते हुए, उक्त प्रतिलिपि मूल दस्तावेज की सामग्री को साबित करने के उद्देश्य से स्वीकार्य हो जाती है। इसलिए, प्रमाणित प्रति साक्ष्य के रूप में स्वीकार्य हो जाती है, लेकिन निष्पादन के सबूत को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता।

10. साक्ष्य अधिनियम की धारा 65 (ई) और धारा 77 निम्नानुसार होगी:–

"(ए).....

(बी).....

(सी).....

(डी).....

(ई) जब मूल दस्तावेज सार्वजनिक दस्तावेज हो

धारा 74 का अर्थ;

(च).....

(छ).....

77. प्रमाणित प्रतियां प्रस्तुत करके दस्तावेजों का सबूत.–ऐसी प्रमाणित प्रतियां सार्वजनिक दस्तावेजों की अंतर्वस्तु या सार्वजनिक दस्तावेजों के उन भागों के सबूत के रूप में प्रस्तुत की जा सकेंगी जिनकी वे प्रतियां होने का दावा करती हैं।"

साथ ही, पंजीकरण अधिनियम की धारा 57 (5) इस प्रकार है:–

"57 (5) इस धारा के अंतर्गत दी गई सभी प्रतियाँ पंजीकरण अधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित और सीलबंद होंगी, और मूल दस्तावेजों की विषय–वस्तु को साबित करने के उद्देश्य से स्वीकार्य होंगी।"

11. अब इन सभी प्रावधानों को संयुक्त रूप से पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि बिक्री विलेख की प्रमाणित प्रति सार्वजनिक दस्तावेज या सार्वजनिक दस्तावेज के उस भाग की सामग्री के प्रमाण के रूप में प्रस्तुत की जा सकती है जिसकी वह प्रति होने का दावा करती है। इसे बिना किसी आधार के सार्वजनिक दस्तावेज के द्वितीयक साक्ष्य के रूप में प्रस्तुत किया जा सकता है। हालाँकि, सावधानी का एक शब्द जोड़ा जा सकता है कि यह केवल मूल दस्तावेज की सामग्री को साबित करेगा और मूल दस्तावेज के निष्पादन का सबूत नहीं होगा।

12. इसलिए, मुझे यह मानने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि विद्वान मुंसिफ, बेगूसराय द्वारा टाइटल सूट संख्या 69/1996 में पारित दिनांक 02.08.2018 के विवादित आदेश में कोई त्रुटि नहीं है, इसलिए इसकी पुष्टि की जाती है।

13. तदनुसार, तत्काल सिविल विविध याचिका खारिज की जाती है।

(अरुण कुमार झा, न्यायमूर्ति)

बालमुकुन्द/–

खंडन (डिस्क्लेमर)– स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नही किया जा सकता । समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।